*RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary* 2021; 6(2):168-172
ISSN: 2455-3085 (Online)
https://doi.org/10.31305/rrijm.2021.v06.i02.027

**Research Paper**

*Double Blind Peer Reviewed/Refereed Journal*
https://www.rrjournals.com/

# महात्मा गाँधी के ट्रस्टीशिप एवं स्वराज संबंधी विचारों का सामान्य विश्लेषण

Dr. Pankaj Bhardwaj

*Research Scholar and Asst. Professor (Political Science), Sanskar Bharti, P.G. College, Bagru, Jaipur*

**ABSTRACT**

मूल प्रश्न यह है कि क्या अहिंसात्मक ढंग से सामंती तथा बुर्जआ समाज की सामाजवादी समाज में बदला जा सकता है ? गाँधी को इस परिवर्तन में पूर्ण आस्था थी क्योंकि उनको मनुष्य की स्वाभाविक सदाशयता में विश्वास था। गाँधी सत्य और अहिंसा के द्वारा ही सामाजिक प्रेम, सद्भाव लाना चाहते थे। विश्वबन्धुत्व की भावना को उत्पन्न करने में अहिंसा को सबसे प्रमुख तत्व मानते थे। सामाजिक और आर्थिक समानता में उनका पूर्ण विश्वास था। इसके संबंध में संदेह नहीं किया जा सकता पर अहिंसात्मक ढंग से आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों के बल पर यह सामाजिक और आर्थिक समानता स्थापित की जा सकती है। इसकी स्थापना करना भविष्य के गर्भ में है। इतना तो सत्य है कि गाँधी ने शुद्ध भौतिकवादी और मात्र वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सामाजिक समस्याओं का हल नहीं ढूंढ़ा वरन् आध्यात्मिक तथा नैतिक दृष्टिकोण को भी उसमें संश्लिष्ट कर दिया जिसके कारण उनका दृष्टिकोण समन्वयवादी हो गया जिसको वामपंथी इतिहासकार समझौता परस्त कहते है। जबकि गांधी राज को हिंसा का प्रतीक मानते है और राज्य की समाप्ति पर बल देते है। गांधी जी द्वारा दिये गये ट्रस्टीशिप, स्वराज एवं राज्य संबंधी विचार प्राथमिक रूप से विलक्षण प्रतीत होते है।

**Keywords:** ट्रस्टीशिप, स्वराज, राज्य, अहिंसा, सत्य।

**Article Publication**

Published Online: 14-Feb-2021

**Author's Correspondence**

Dr. Pankaj Bhardwaj

Research Scholar and Asst. Professor (Political Science), Sanskar Bharti, P.G. College, Bagru, Jaipur

pbamogh2006@gmail.com

© 2021The Authors. Published by *Research Review Journals*

This is an open access article under the CC BY-NC-ND license (https://creativecommons.org/licenses/by-nc-nd/4.0/)

## शोध विस्तार–

ट्रस्टीशिप की योजना अल्पकालिक नहीं थी बल्कि समता पर आधारित समाज की रचना में गाँधी इसे स्थायी रूप देना चाहते थे। मार्क्सवादियों की तरह राज्य की शक्ति के क्रमिक ह्रास में गाँधी जी विश्वास करते थे लेकिन ट्रस्टीशिप की योजना को विकेन्द्रित सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक शक्ति को स्थायी बनाने के लिए इसको कायम रखने में विश्वास करते थे। राज्य या ग्रामपंचायतों द्वारा जब कानून के बल पर ट्रस्टीशिप की अवधारणा को कार्यावित्त किया जायेगा तब ट्रस्टी की मृत्यु के बाद कौन उत्तराधिकारी होगा ? ट्रस्टी के संतानों का उनका उत्तराधिकारी होना आवश्यक नहीं है क्योंकि जरूरी नहीं है कि उनके बच्चों में त्याग और बलिदान पर आधारित ट्रस्टीशिप की भावना उनमें विद्यमान ही हो। इस प्रकार पारिवारिक उत्तराधिकार का सिद्धान्त इसमें लागू नहीं किया जा सकता। उनके संतानों को उत्तराधिकार का अधिकार तभी दिया जा सकता है जब वे अपनी उपर्युक्ता सिद्ध करें।[1] यदि ट्रस्टियों के बच्चे स्वार्थों में लिप्त रहते है तथा सामाजिक संरचना सफलतापूर्वक नहीं कर सके। गाँधी इस अर्थ में बुर्जआ थे कि पूंजीवादी साम्पत्तिक व्यवस्था पर आधारित समाज के औचित्य में उनकी आस्था थी और वे मानते थे कि सामाजिक अराजकता के अतिरिक्त इस व्यवस्था का कोई विकल्प नहीं। गाँधी ने पूंजीवादी शोषण की बात मानी और ज्वलंत शब्दों में उसकी बर्बरता की निन्दा की, लेकिन वे अपने मूलभूत बुर्जुआ दृष्टिकोण की परिधि अतिक्रमण नहीं कर सके। गाँधी का जनसाधारण में विश्वास था, लेकिन साथ ही वे बुर्जुआ सामाजिक व्यवस्था में विश्वास करते थे। गाँधी ने कहा था कि सभी भूमि गोपाल की या सब कुछ ईश्वर का है व्यक्ति का कुछ भी नहीं लेकिन इन विचारों को उपनिषदों से तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों से गाँधी को प्रेरणा मिली। इसलिए विज्ञान और भौतिकवाद में विश्वास रखने वाले विचारक उनके विचारों से सहमत नहीं हो सकें है।[2]

आप कह सकते है कि ट्रस्टीशिप तो कानून–शास्त्र की एक कल्पना मात्र है, व्यवहार में उसका कहीं कोई अस्तित्व दिखाई नहीं पड़ता। लेकिन यदि लोग उस पर सतत् विचार करें और उसके आचरण में उतारने की कोशिश भी करते रहे तो मनुष्य जाति के जीवन की नियामत शक्ति के रूप में प्रेम आज जितना प्रभावशाली दिखाई देता है, उससे कहीं अधिक दिखाई पड़ेगा। बेशक, पूर्ण ट्रस्टीशिप तो युक्लिड की बिन्दु की व्याख्या की तरह एक कल्पना ही है और उतना ही अप्राप्य भी है, लेकिन यदि उसके लिए कोशिश की जाय तो दुनिया में समानता की स्थापना की दिशा में हम दूसरे किसी उपाय से जितना दूर तक जा सकते है, उसके बजाय इस उपाय से ज्यादा दूर तक जा सकेंगे। मेरा दृढ़ निश्चय है कि यदि राज्य ने पूंजीवाद को हिंसा के द्वारा दबाने की कोशिश की तो वह खुद ही हिंसा के जाल में फँस जायेगा और फिर कभी भी अहिंसा का विकास नहीं कर सकेगा। राज्य अहिंसा का एक केन्द्रित और संगठित रूप ही है। व्यक्ति में आत्मा होती है, परन्तु चूंकि राज्य एक जड़ यंत्र–मात्र है, इसलिए उसे हिंसा से कभी नहीं छुडाया जा सकता, क्योंकि हिंसा से ही तो उसका जन्म होता है। इसलिए मैं ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को तरजीह देता हूं। यह डर हमेशा बना रहता है कि कहीं राज्य उन लोगों के लिखाफ, जो उससे मतभेद रखते है, बहुत ज्यादा हिंसा का उपयोग न करें। लोग यदि स्वेच्छा से ट्रस्टियों की तरह व्यवहार करने लगे तो मुझे सचमुच बड़ी खुशी होगी। लेकिन यदि वे ऐसा न करे तो मेरा ख्याल है कि हम राज्य के द्वारा भरसक कम हिंसा का आश्रय लेकर उनसे उनकी सम्पति ले लेनी पड़ेगी। (यही कारण है कि मैंने गोलमेज परिषद् में यह कहा था कि सभी निहित हितवालों की सम्पति की जांच होनी चाहिए और जहां आवश्यक मालूम हो, वहां उनकी सम्पति राज्य को मुआवजा दिये बिना ही, जहां जैसा उचित हो, अपने हाथों में कर लेना चाहिए)। व्यक्तिगत तौर पर तो मैं यह चाहूंगा कि राज्य के हाथों में शक्ति का ज्यादा केन्द्रीकरण न हो, उसकी बजाय ट्रस्टीशिप की भावना का विस्तार हो, क्योंकि मेरी राय में राज्य की हिंसा की तुलना में वयक्तिक मालिकी की हिंसा कम हानिकर है, लेकिन यदि राज्य की मालिकी अनिवार्य ही हो तो मैं भरसक कम से कम राज्य की मालिकी की सिफारिश करूँगा।[3]

मेरा ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त कोई ऐसी चीज नहीं है, जो काम निकालने के लिए आज बढ़ा लिया गया हो। अपनी मंशा छिपाने के लिए खड़ा किया गया आवरण तो वह हरगिज नहीं है। मेरा विश्वास है कि दूसरे सिद्धान्त जब नहीं रहेंगे, तब भी वह रहेगा। उसके पीछे तत्वज्ञान और धर्म के मालिकों ने इस सिद्धान्त के अनुसार आचरण नहीं किया है, इस बात से यह सिद्ध नहीं होता कि वह सिद्धान्त झूठा है, इससे धन के मालिकों की कमजोरी मात्र सिद्ध होती है। अहिंसा के साथ किसी दूसरे सिद्धान्त का मेल ही नहीं बैठता। अहिंसक मार्ग की खूबी यह है कि अन्यायी यदि अपना अन्याय दूर नहीं करता तो वह अपना नाश खुद कर डालता है, क्योंकि अहिंसक असहयोग के कारण या तो वह अपनी गलती देखने और सुधारने के लिए मजबूर हो जाता है या वह बिलकुल अकेला पड़ जाता है।[4]

ट्रस्टीशिप या न्यासिता की अवधारणा गाँधीवादी आर्थिक व्यवस्था की मौखिक इकाइयों में से है जिसका आधार वस्तुतः अहिंसा, स्वराज और समता है। गाँधी जी का मत है कि समाज अहिंसा पर आधारित है। गाँधी जी का वास्तविक उद्देश्य ऐसी अर्थ–व्यवस्था का निर्माण करना है जो शोषणरहित हो। उनके ट्रस्टीशिप के सिद्धांत में आत्मनिर्भरता, परोपकारिता, उत्पादन करने वाली इकाई की स्वायत्तता का होना अनिवार्य है। अहिंसा, समान–वितरण और न्यासिता एक–दूसरे पर आधारित है।

गाँधी जी के अनुसार न्यासिता ऐसा साधन है जो अहिंसात्मक है तथा जिसके माध्यम से आर्थिक परिवर्तन लाया जा सकता है। इसके मूल में यह भावना काम करती है कि धनवान व्यक्तियों द्वारा अपनी अतिरिक्त सम्पत्ति के लिए संरक्षता की भावना रहनी चाहिये और अपने पड़ोसियों की तुलना में उसे एक रूपया भी ज्यादा नहीं रखना चाहिये। गाँधी जी ने ट्रस्टीशिप की अवधारणा को अत्यन्त गतिशील माना है।[5]

संरक्षणता अथवा न्यासिता का सिद्धांत सभी मुख्य आर्थिक क्षेत्रों जैसे उद्योग, कृषि, वाणिज्य, आदि पर लागू होता हैं। न्यासिता आर्थिक समस्याओं को सुलझाने का एक निश्चित राजनीतिक दृष्टिकोण है तथा यह दृष्टिकोण समाजवादी व पूँजीवादी विचारधाराओं से भिन्न है। गाँधी जी का ट्रस्टीशिप सिद्धांत इस प्रकार से उस समस्या का समाधान था जिसे श्रम और पूँजी के बीच अपरिहार्य संघर्ष कहा जाता है। न्यासिता का एक बुनियादी सिद्धांत है कि पूँजीपति और श्रमिक दोनों मिलकर न्यासी होंगे, कोई किसी का मालिक नहीं होगा।

न्यासिता का सिद्धांत एकपक्षीय नहीं हैं, यह आपसी संबंधों पर आधारित है। इसमें प्रत्येक का एक–दूसरे पर विश्वास होता है और इसमें एक–दूसरे के हितों की रक्षा करने का प्रयास किया जाता है।

गाँधी जी के अनुसार पूँजीपति यदि स्वेच्छा से न्यासी बनने को तैयार न हो तो जनमत के दबाव से ऐसा किया जा सकता है लेकिन इसके लिए जनमत को संगठित करने के आवश्यकता होती है। अहिंसक असहयोग ही जगत की वास्तविक शक्ति होती है।

एक बार जगत को अहिंसक असहयोग और उसकी शक्ति से प्रति जाग्रत कर देने के पश्चात् न्यासिता का विचार अपने आप अस्तित्व में आ जाएगा। न्यासिता की स्थापना हेतु गाँधी जी ने 6 सूत्री योजना प्रस्तुत की हैं–[6]

- न्यासिता समाज की वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था को समाजवादी–व्यवस्था में परिवर्तित करती है। यह पूँजीवाद में सुधार करने के अवसर प्रदान करती है।
- यह सम्पत्ति के निजी अधिकार की समाप्ति में विश्वास करती है।
- यह पूँजी के स्वामित्व एवं उपयोग पर व्यवस्थापन नियमों को पृथक् नहीं करती है।
- यह किसी भी व्यक्ति को समाज के हितों के विरूद्ध निजी स्वार्थ के लिए सम्पत्ति संग्रह की स्वीकृति नहीं देती।
- इसमें न्यूनतम पारिश्रमिक निर्धारित करने के साथ–साथ समाज में व्यक्ति की अधिकतम आय की सीमा भी निर्धारित की जायेगी।
- अर्थ–व्यवस्था में उत्पादन का स्वामित्व सामाजिक आवश्यकताओं के आधार पर निर्धारित होगा न हि व्यक्तिगत इच्छा अथवा लाभ द्वारा।

गाँधी जी ने संरक्षता को अवसरवादिता की अपेक्षा नैतिक अहिंसक सिद्धांत की शक्ति माना है। उन्होंने सत्याग्रह को संरक्षता के लिए बड़े पैमाने पर आवश्यक माना। हिंसा, घेराव, अपमान को अनुचित बताते हुए यह भी कहा कि यदि समझाने–बुझाने की सभी कोशिशें बेकार हो जायें तो राज्य अपेक्षित सम्पत्ति को अपने कब्जे में ले सकता है, लेकिन इसमें अहिंसा अनिवार्य है।

गाँधी जी ने अपने विचारों और योजनाओं को क्रियान्वित करने हेतु वर्ग–सामंजस्य और उत्पादन–वृद्धि की सुरक्षित व्यवस्था को महत्वपूर्ण माना। उन्होंने पूँजीवादी एकाधिकार और शोषण के निवारण के लिए राज्य के कार्यों को सीमित बताया। गाँधी जी मानवीय, नैतिक, विकेन्द्रीयकृत, सहज, सरल, विश्वासपरक तथा शांतिपूर्ण प्राथमिकताओं के आधार पर अर्थतन्त्र की पुनः स्थापना करना चाहते थे। उन्होंने श्रमिकों से उनके अधिकारों का संरक्षण करते हुए रचनात्मक गत्यात्मकता के साथ–साथ उनके रचनात्मक–कार्यक्रमों में साम्प्रदायिक–एकता, अस्पृश्यता, स्त्री– दशा सुधार, खादी, चर्खा–प्रसार, बुनियादी–शिक्षा, स्वास्थ्य–स्वच्छता की प्राथमिकता एवं राष्ट्रभाषा के माध्यम से नवीन समाज की स्थापना का आह्वान किया। गाँधी जी के अनुसार अहिंसक आर्थिक व्यवस्था की स्थापना के लिए पूँजीपतियों को श्रमिको का उचित स्थान स्वीकार करना होगा अन्यथा वे क्रांति की ओर अग्रसर होंगे। साथ ही वे श्रमिकों की दायित्वपूर्ति में अपनत्व की अपेक्षा करते थे। गाँधी जी अर्थतन्त्र में नैतिकता को अनिवार्य मानते थे और व्यक्ति की गरिमा और महत्ता की पुनर्स्थापना पर जोर देते थे।

गाँधी जी का मानना था कि गरीब के लिए रोटी ही ईश्वर है। अतः मशीनों की संवृद्धि पर रोक आवश्यक है। सादगी उनके अनुसार दरिद्रता की निशानी न होकर प्रगति की निशानी है। भारतीय सभ्यता व संस्कृति ने प्रारंभ से ही हमें यह सिखाया है कि सच्चा सुख निस्वार्थ सेवा है। अपनी आवश्यकताओं एवं इच्छाओं को सीमित रखना ही सच्चा सुख है। उनका ट्रस्टीशिप सिद्धांत नैतिक एवं अहिंसक अर्थव्यवस्था का संदंश है।

खुद गाँधी जी व्यवहार में आधुनिक और भारतीय दोनों सभ्यताओं से लड़ रहे थे। लेकिन प्रतिपादन में, लेखन तथा प्रचार में उनका एक ही निशाना रहा आधुनिक पश्चिमी सभ्यता। श्रीपटनायक कहते है कि, भारतीय सभ्यता और हिन्दू व्यवस्था से उनको हर कदम पर टकराना पड़ा। मृत्यु भी उसी से हुई। लेकिन हिन्दू धर्म को श्रेष्ठ बताना उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। यह या तो एक प्रकार का छद्म था या फिर सन्तुलित विचार की कमी थी। इसी कारण अभी तक एक संतुलित गाँधी विचार नहीं बन सका। यद्यपि गाँधीवादी विचार की एक निश्चित दिशा नहीं बन पाई है फिर भी आज लोग अपनी समस्याओं के समाधान के लिए गाँधी की ओर ही देख रहे है कारण यह है कि गाँधी ने जो विचार दिये है, उसको किया भी है। अतः उनके प्रयोग मात्र वैचारिक नहीं है। उन्हें जीवन में उतारा जा सकता है।[7]

गाँधी शताब्दियों से शोषित तथा उत्पीडित सर्वहारा वर्ग के लोगों के लिए आजीवन संघर्ष करते रहे। दक्षिण अफ्रीका में बंधुआ मजदूरों के लिए सत्याग्रह आन्दोलन चलाया। चम्पारन में किसानों को नील बागानों के स्वामियों के अत्याचारों से मुक्त करने के लिए संघर्ष किया। उन्होंने गांवों के गरीब लोगों की प्राथमिक शिक्षा और चिकित्सकीय सुविधा प्रदान करने की व्यवस्था की। खेड़ा में किसानों को ब्रिटिश शासन के अत्याचार के विरूद्ध संघर्ष करने का साहस प्रदान किया। अहमदाबाद के मिल मजदूरों की मांगों के लिए उपवास किया और उनकी मांगे मिल मालिकों को मंजूर करनी पड़ी।[8]

गाँधीवादी विचार दर्शन में आध्यात्मिकता का पक्ष दृढ़तर है और यहीं तत्व गाँधी विचारधारा को प्रभावित करता रहा है। नेहरू को जो समाजवाद के बहुत निकट रहे है, उन्हें भी गाँधी की आध्यात्मिक विचारधारा को अपने अन्तिम दिनों में कुछ अंशों तक स्वीकार करना पड़ा। उन्होंने कहा था आज संसार जो कुछ खोज रहा है उससे लगता है कि मानव जीवन को नये आयाम और नये संतुलन की तलाश है। केवल आध्यात्मिक गहराई तथा नैतिक शक्ति से पूर्णरूपेण एकीकृत और समन्वित मनुष्य ही नये युग के चैलेंज का सफलतापूर्वक सामना कर सकता है।

गाँधी विचार का विवेचन करते हुए मधुलिमये ने गाँधी की सर्वकालिकता को स्वीकार किया है। यद्यपि उन्होंने गाँधी के बाद परिस्थितियों में हुए परिवर्तन को देखते हुए उनकी नीतियों और कार्यक्रमों की सफलता में संदेह भी व्यक्त किया है। फिर भी उनका कहना है कि गाँधीवादी विचार की जो आत्मा है, भावना है अगर वह भारत के अनुकूल है, जैसा कि वे समझते है, उसके आर्थिक विकेन्द्रीकरण और राजनीतिक विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त को या अहिंसात्मक प्रतिकार के सिद्धान्त को स्वीकार करना होगा।

गाँधी सर्वोदय के सामाजिक दर्शन के माध्यम से व्यक्ति और समाज में समग्र और समन्वित विकास में आस्था रखते थे। उन्होंने सर्वोदय के द्वारा शासन से अनुशासन की ओर, सत्ता से स्वतंत्रता की ओर नियंत्रण से संयम की ओर अधिकारों से स्पर्धा से कर्त्तव्यों के आचरण की ओर बढ़ने की बात कहीं। यही नहीं बल्कि उन्होंने मार्क्स की कोरी भौतिकता के विकल्प के रूप में सर्वोदय दर्शन को समाज के सामने रखा।[9]

जब तक **राज्य विहीन लोकतंत्र का** आदर्श समाज में संभव नहीं होता तब तक राज्य का संगठन कैसे किया जाये ? इस प्रश्न का उत्तर गांधीजी उदारवादी दृष्टिकोण से देते हैं। गांधीजी पर उदारवादी दर्शन का प्रभाव है। वे व्यक्ति, उसकी गरिमा एवं उसकी स्वतंत्रता के अनन्य उपासक हैं। व्यक्ति ही उनके विचारों में राज्य की आधारशिला एवं उसका निर्माता है।

गांधीजी ''ग्राम स्वराज की धारणा का प्रतिपादन करते हैं।'' इस संबंध में गांधीजी के विचारों को ही हम यहाँ संक्षिप्त रूप से विश्लेषित कर रहे है। ''ग्राम स्वराज्य का मेरा विचार यह है कि वह पूर्ण गणतंत्र हैं, अपनी आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसियों से पूर्ण स्वतंत्र है, फिर भी जहाँ पारस्परिकता आवश्यक है उन मामलों में वह परस्पराश्रित होगा। इस प्रकार प्रत्येक गाँव का प्रथम कर्तव्य अपनी खाद्य फसल को उगाना तथा कपड़े के लिए रूई को उत्पन्न करना होगा। मवेशियों के लिए उसके अपने चारागाह तथा वयस्क एवं बालकों के खेलकूद एवं मनोविनोद के लिए मैदान होने चाहिएं। इसके बाद यदि उसके पास भूमि रह जाती है, तो वह उपयोगी मुद्रार्जन करने वाली फसल को बोयेगा, किंतु गाँजा, तम्बाखू इत्यादि को नहीं बोयेगा। गाँव का अपना ग्राम्य रंगमंच, स्कूल तथा सार्वजनिक सभा–भवन होगा। उसकी अपनी जल–प्रदाय होगी जिससे कि गाँव को स्वच्छ पानी प्राप्त हो सके। बेसिक पाठ्यक्रम तक शिक्षा अनिवार्य होगीं। जहाँ तक संभव होगा, प्रत्येक कार्य को सहकारिता के आधार पर किया जाएगा। जिस प्रकार की आज की जातियाँ तथा अस्पृश्यता है, गाँव में उनका कोई स्थान नहीं होगा। ग्रामीण समुदाय की आज्ञाप्ति अहिंसा में एवं उसकी सत्याग्रह तथा असहयोग की तकनीक में निहित होगी। गाँव का शासन पाँच लोगों की पंचायत के द्वारा संचालित होगा। इन पाँच लोगों का प्रतिवर्ष चुनाव वयस्क ग्रामीणों के द्वारा, पुरूषों एवं स्त्रियों के द्वारा होगा और जिनकी न्यूनतम योग्यतायें निर्धारित होंगी। इनको संपूर्ण सत्ता तथा आवश्यक क्षेत्राधिकार प्राप्त होगा। क्योंकि यहाँ दण्ड व्यवस्था नहीं होगी, यह पंचायत ही व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्याय–पालिका की शक्तियों का समूह होगा जिससे कि वह अपने वर्ष भर के कार्य को कर सके। मेरा उद्देश्य ग्रामीण शासन की रूपरेखा प्रस्तुत करना है। यहाँ पर व्यक्ति की स्वतंत्रता पर आधारित पूर्ण प्रजातंत्र है। व्यक्ति ही अपनी सरकार का विधाता है। अहिंसा का नियम उसका एवं उसकी सरकार का शासन है।''[10]

जब तक राज्य का लोप नहीं होता, भारत के राष्ट्रिय राज्य का क्या स्वरूप होगा? गांधीजी के विचारानुसार यह उपरोक्त वर्णित ''स्वतंत्र ग्राम गणराज्यों का एक संघ'' होगा। इस संघ की रचना के संबंध में वे लिखते हैं : ''भारत में सात लाख गाँव हैं। प्रत्येग गाँव को उन लोगों की इच्छानुसार संगठित किया जाएगा। ग्राम, जिला प्रशासन के लिए अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करेंगे। इस चुनाव में प्रत्येक ग्राम का एक वोट होगा। जिलों के प्रतिनिधि प्रान्तीय शासन का चुनाव करेंगे और प्रान्तीय प्रतिनिधि राष्ट्रपति का चुनाव करेंगे जो कि राष्ट्र का कार्यकारी प्रमुख होगा।'' इस व्यवस्था में केन्द्रीय सत्ता का दायरा ग्रामों के बीच समन्वय स्थापित करना होगा जबकि वास्तविक विधायिनी एवं कार्यपालक शक्तियों का प्रयोग गाँवों तथा जिले के प्रतिनिधियों के हाथों में रहेगा। इस रूपरेखा से गांधीजी की राज्य की कल्पना का चित्र हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। यह अहिंसा पर आधारित राज्य है जिसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता उसका लक्ष्य भी हैं और उसका प्रारम्भ बिन्दु भी। सर्वोदय उसका अंतिम ध्येय है तथा सत्ता का उसमें विकेन्द्रीकरण है और सहकारिता उसकी कार्यविधि का माध्यम है।[11]

## निष्कर्ष–

ट्रस्टीशिप की अवधारणा गाँधीवादी चिन्तन की एक महत्वपूर्ण देन है। गाँधी पूंजीवादी और नौकरशाही के सरकारी नियंत्रणवाद दोनों का समूल विनाश चाहते थे। वे पूंजीवाद के उतने ही विरोधी थे जितने साम्यवादी पर वे हिंसात्मक क्रांति के द्वारा राजशक्ति के माध्यम से बलपूर्वक सामाजिक परिवर्तन के विरोधी थे। वे वर्ग संघर्ष के स्थान पर वर्ग सामंजस्य में विश्वास करते थे। पूंजीवाद के दोषों के विरोधी थे व्यक्ति के नहीं। ट्रस्टीशिप के अनुसार पूंजीपति अपनी सम्पति का संरक्षक होगा और उस सम्पति का उपयोग समाज के हित में ही कर सकता है। इस संबंध में गाँधी ने कहा था, ''जितना धन फालतू है, उसकी स्वेच्छा से समर्पित करने के अलावा पूंजीपतियों के पास कोई चारा नहीं है जिससे उन्हें एक ओर सबकी खुशी हासिल हो सके और दूसरी ओर आसन्न अराजकता को रोक सके, जो समय रहते न जागने के कारण करोड़ों अज्ञानी और भूखों के खड़े होने पर सारे देश पर छा जायेगी और जिसे शक्तिशाली सरकार की सेनाये भी नहीं टाल सकेंगी। सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तनों के क्षेत्र में गाँधी ने सर्वोदय और ट्रस्टीशिप की विचारधारा का प्रणयन किया था। सर्वोदय का अर्थ था सबका उदय, सबका उत्कर्ष तथा सब का विकास। सम्पूर्ण मानवसमाज का सर्वांगीण विकास ही गाँधीवादी समाज–दर्शन का मूल तत्व है।

गाँधी एक क्रमबद्ध सिद्धान्तकारी विचारक थे शास्त्रीय दार्शनिक नहीं थे। फिर भी वे एक अद्‌भुत व्यक्ति थे जिन्होंने भौतिक मूल्यों की अपेक्षा मानवीय मूल्यों को अधिक महत्व दिया। उनके जीवन में विचित्र विरोधामास परिलक्षित होते है।

## संदर्भ सूची–


1. गाँधी, रचनात्मक कार्यक्रम, पृ. 12–14
2. गाँधी, मेरे सपनों का भारत, (संक्षिप्त, सिद्धराज चड्ढ़ा), वाराणसी, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, 1959, पृ. 115–118
3. हरिजन सेवक, 4 मई, 1934
4. गाँधी, धर्मनीति, नई दिल्ली, सस्ता साहित्य, मण्डल, 1947, पृ.150
5. डॉ. वेदप्रकाश शर्मा, महात्मा गाँधी का नैतिक दर्शन, दिल्ली, इन्दु प्रकाशन, 1979, पृ. 77
6. यंग इण्डिया, 1 दिसम्बर, 1921
7. गाँधी, रचनात्मक कार्यक्रम, अहमदाबाद, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, 1951, पृ. 12–14
8. यंग इण्डिया, 25 मई, 1921
9. के.जी. मशरूवाला (सम्पा.), गाँधी विचार दोहन, नई दिल्ली, सस्ता साहित्य प्रकाशन, 1962, पृ. 45
10. डॉ. वेदप्रकाश शर्मा, महात्मा गाँधी का नैतिक दर्शन, दिल्ली, इन्दु प्रकाशन, 1979, पृ. 79
11. के.जी. मशरूवाला (सम्पा.), गाँधी विचार दोहन, नई दिल्ली, सस्ता साहित्य प्रकाशन, 1962, पृ. 59